पर्दे का स्वरूप तथा उप्लब्धियाँ

मौलाना नफ़ीस हैदर हल्लौरी

''वृद्धि'' एवं ''सहजता' द्वारा सन्तोष प्राप्त करना ठीक उसी प्रकार होगा जैसा आग में लकड़ी फ़ेक कर कोई आग बुझाना चाहे–

''इच्छा उस बालक के समान है जिसे मांके दूध से यदि रोका न जाय तो यह कम चलता ही रहेगा।''

भारत के प्रथम प्रधान मन्त्री पन्डित जवाहर लाल नेहरू के अनुसार इस्लाम में पर्दे का प्रचलन रोम तथा ईरान की उन जातियों द्वारा हुआ जो मुसलमान नहीं थीं। अपनी प्रसिद्ध पुस्तक ''विश्व के इतिहास पर एक नज़र'' नाम 1 पृष्ठ 328 पर उन्होंने विस्तार से इस विषय में चर्चा की है।

जहाँ तक भारत का प्रश्न है, तो पर्दा यहाँ भी था और बहुत कड़ा था लेकिन यह कहना कठिन है कि इस्लाम के साथ ही यहाँ पर्दे का पर्दापण हुआ या उस से पूर्व विद्यमान था। यह अवश्य है कि रोम तथा ईरान की भाँति प्राचीन काल ही से भारत में बड़ा कठोर पर्दा था। इसके अतिरिक्त संसार के विभिन्न भाग की अनेक जातियों में पर्दे का अस्तित्व इस्लाम से पूर्व ही पाया जाता था।

उस पर्दे का नियम इस्लामी पर्दे से अधिक कठोर था। वेल डयरेन्ट की पुस्तक ''संस्कृति का इतिहास'' भाग 12 पृष्ठ 30 में मिलता है कि यदि कोई स्त्री यहूदी नियम के विरूद्ध पर्दे की ख़िलाफ़वर्ज़ी कर देती तो पति को अधिकार था कि उस से सम्बन्ध विच्छेद कर ले। ईरान में विवाहित स्त्री अपने पिता तथा भाई के सामने बिना पर्दा नहीं आ सकती थी। पारसी नियमानुसार मासिक धर्म की अवधि में स्त्री एक कमरे में बन्द हो जाती थीं। तार्त्पय यह कि यह वास्तविकता सर्व मान्य है कि संसार में पर्दे का प्रचलन इस्लाम से पूर्व ही था अर्थात इस्लाम पर्दे का अविष्कारक नहीं।

उत्पत्ति का कारण

पर्दा का प्रचलन कैसे हुआ? क्या कारण था? इसके प्रेरक प्रसंग क्या थेत्र और इस्लाम ने, जिसके नियमों को प्राकृतिक सिद्धान्तों पर आधारित है बताया जाता है, क्यों पर्दे को अपना समर्थन दिया और प्रोत्साहित किया? इस प्रश्न के उत्तर खोजने के लिए कई पक्षों को उलटा–पलटा जाता है और अनेकों कारणों की विवेचना की जाती है।

उनसे थोड़ा बहुत तथ्य तो निकलता है लेकिन वास्तविक कारण नारी की उस मोहकता में खोजना चाहिए जो अल्लाह ने उसे विशेष रूप से प्रदत्त की है। इस सम्बन्ध में महत्वपूर्व दृष्टिकोण यह है कि लाज और पर्दा ऐसी युक्ति है जिसे नारी ने स्वयं पुरूष के समक्ष अपना महत्व बढ़ाने और अपने व्यक्तित्व की सुरक्षा के लिए प्रयोग किया। उसकी प्राकृतिक चेतना एवं संवेदन शीलता ने आभास दिया कि शारीरिक रूप से वह पुरूष के समान नहीं हो सकती लेकिन पुरूष की (नारी–चाहत) वह कमज़ोरी नारी ने जान ली। जिसे प्रकृति ने पुरूषों के अस्तित्व में सम्मलित कर दिया है।

जब स्त्री को अपना अस्तित्व पुरूष की अपेक्षा दुर्बल प्रतीत हुआ साथ ही पुरूषों की दुर्बलता भी जान गई तो अपनी पकड़ मज़बूत करने के लिए जिस प्रकार अपना साज़ श्रंगार किया उसी प्रकार उससे स्वंय को दूर रखने का प्रयास भी किया। नारी ने समझ लिया कि अपनी महत्ता की सुरक्षा करना आवश्यक है। तथा उस महत्ता को बढ़ाने के लिए पुरूषों के लिए में आकुलता और माँग की प्यास को बढ़ाना चाहिए।

इस तर्क से यह स्पष्ट हो जाता है कि,

स्त्री ने स्वयं को पुरूष की पहुँच से दूर रख कर, और उस की लालसा बढ़ा कर, उसे अपनी पकड़ में रखने के जिए पर्दे का उपयोग एक साधन के रूप में किया। तात्पर्य यह है कि पर्दे की उत्पत्ति का यही मौलिक कारण जान पड़ता है।

पर्दे की उप्लब्धियाँ

पुरूषों में नारी के प्रति एक आकर्षण युक्त उत्तेजना पायी जाती है जिस पर प्रतिबन्ध लगा कर यदि उचित संचालन न किया जाये तो समाज दूषित हो जाएगा। इस समाजिक आवश्यकता को ध्यान में रखकर इस्लाम ने विशेष प्रबन्ध किया है।

कुरआन मजीद के सूर–ए– ''नूर'' की 30–31 की आयत का भावार्थ यह है कि स्त्री और पुरूष एक दूसरे पर वासना पूर्ण निगाह न डालें। आनन्द के लिए आखें चार न करें। नारी के लिए विशेष कर्तव्य है कि अपने शरीर को बेगानने पुरूषों से छिपाए रखें और पुरूषों के बीच अपनी सुन्दरता का प्रदर्शन न करें। किसी भी प्रकार और किसी भी स्थिति में ऐसी गतिविधियों से स्वयं को बचाए रखें जो पुरूषों को उनके प्रति आकर्षित करें। दामपत्य जीवन के गृहस्थ वातावरण में शारीरिक आनन्द पति पत्नी के सम्बन्ध को शाक्ति शाली बनाता है और उन्हें एक दूसरे के निकटतम करता है।

समुचित वस्त्र की अनिवार्यता और पराई स्त्री से शारीरिक सम्बन्ध पर प्रतिबन्ध का उद्देश्य गृहस्थ जीवन के दृष्टिकोण से यह है कि वध पत्नी ही पुरूष के शारीरिक आनन्द का मात्र साध ान हो जब कि इस क्षेत्र में प्रायः देखा गया है कि वैद्य पत्नी एक खलनायक और पुलिसमैन समझी जाती हैं जाती है। परिणाम स्वरूप दामपत्य जीवन तनावपूर्ण हो जाता है। वर्तमान युग में नवयुवकों की विवाह के प्रति अरूचि का भी यही कारण है। जब कि बीते दिनों विवाह की कामना हार्दिक इच्छा तथा आकांक्षा समझी जाती थी। परन्तु वर्तमान संस्कृति ने नारी को एक बाज़ारू वस्तु बना दिया है। जब आवश्यकता हुई खरीद लिया। यही कारण है कि विवाह के लिए अब पहले जैसा आकर्षण नहीं रह गया है।

स्त्री–पुरूष के सम्बन्धों की स्वंत्रतत्रता ही का यह परिणाम है कि अवैधानिक शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करने में अधिक कठिनाई नहीं होती। इस प्रकार जब विवाह से पूर्व ही शारीरिक सुख प्राप्त होने लगता है तो विवाह के लिए वे क्यों उत्सुक हों? इस स्थिति में प्रायः यह देखा गया है कि जब समाजी या पारिवारिक आवश्यकता अन्तिम सीमा पर पहुंच जाती है। तब विवाह किया जाता है। तब तक शारिरीक उत्तेजना में शिथिलता आ जाती है। जिससे उनके दामपत्य जीवन में सौर्हाद और घनिष्टता नहीं आने पाती। अधिकांश वे आपस में कटुव्यवहार करने लगते हैं। एक दूसरे का चरित्र सदिंग्ध हो जाता है। और आज कल के प्रचलित शब्द में वे दूसरे को ''जेलर'' समझने लगते हैं। जब कोई लड़की या लड़का अपने विवाह का आभास देते हैं तो कहा जाता है कि मैने अपने लिए ''जेलर'' खोज लिया है।

इसका कारण यह है कि विवाह से पूर्व वे चाहे जहाँ आ जा सकते हैं। जिससे जी चाहे मिल जुल सकते हैं परन्तु विवाह हो जाने पर प्रत्येक स्वतन्त्रता पर प्रतिबन्ध लग जाता है। देर गए जब पति रात में घर लौटता है तो पत्नी उससे 'जवाब तलब' करती है। पति की अनुपस्थिति में पत्नी का बाहर कहीं रहना ''गृह द्वन्द'' की भूमिका बन जाता है। ऐसे वातावरण में ''दामपत्य जीवन'' किना सन्तोषप्रद होगा? इसका सहज आभास किया जा सकता है। परन्तु विवाह से पूर्ण और पश्चात भी यदि पर्दे का पालन किया जाय तो इन परिस्थितियों का सामना नहीं करना पड़ेगा अर्थात सुखमय दाम्पत्य जीवन के लिए पर्दा का उल्लेखनीय योगदान रहता है।

पर्दा के भावार्थ में यह नहीं समझना चाहिए कि इससे नारियों को क़ैद कर दिया जाता है। या पर्दे का तात्पर्य यह नहीं है कि इस से नारियों को सामाजिक, सांस्कृतिक तथा किसी

भी प्रकार के अधिकार से वंचित कर दिया जाता है। इस्लाम यह नहीं कहता कि स्त्री घर से बाहर ही न निकले और न तो शिक्षा–दीक्षा, ज्ञान–सम्मान प्राप्त करने से इस्लाम स्त्रियों को रोकता हैं आर्थिक क्षेत्र में उतरना इस्लाम में स्त्रीयों के लिए निषेध नहीं है। स्त्रीयों घर में बेकार बैठी रहें यह कभी इस्लाम नहीं कहता।

यदि नवयुवक तथा नवयुवतियां अलग–अलग शिक्षा प्राप्त करें या एक ही साथ कक्षा तथा विद्यालय में शिक्षा ग्रहण करें तो प्रयाप्त परिधान रखें, स्वयं को बना सजा कर रखने के स्थान पर शिक्षा प्राप्त करने में ध्यान दें।

जब नवयुवतियाँ घुटनों से ऊपर का स्कर्ट या चुस्त पैजामा अथवा आकर्षक ढंग से साड़ी कमर से बांध कर सजे सजाये फ़ैशन वाले पैंट शर्ट पहले नवयुकों से सट कर शिक्षा प्राप्त करना चाहें तो वास्तव में बताइए उनका मन अध्ययन में लगेगा? या वे एक दूसरे को वासनापूर्ण दृश्य से देखने से स्वयं को रोक पायेंगे? उनका ध्यान कक्षा से कहीं और होगा कि नहीं? क्या कोई नवयुवक ऐसे कार्यालय, कारखाना या फैक्ट्री अथवा दुकान या बाज़ार में अपना कर्तव्य निष्ठापूर्वक पूरा कर सकेगा जहाँ तितलियों की भांति रंगीन और आकर्षक फ़ैशन की नवयुवतियाँ अपनी सुन्दरता का जाल फैला रहीं हैं? यदि कोई इस वातावरण से अपरिचित हो तो उससे जानकारी की जा सकती है जो इससे बच कर रहता हैं।

वास्तविकता यह है कि अुनसरण की आदत ने पश्चिम की धिनावनी सभ्यता को हमारे समाज में ऐसा रचा–बसा दिया है कि यूरोप और अमेरिका की फोटो कापी बन गया है। पश्चिम का यह उपहार हमारे समाज को अपने वश में करके अपने विलासी उत्पादनों का अच्छा ग्राहक बनाता है। इसे समझ कर भी हम फ़ैशन परस्ती के दीवाने हुए जाते है। चाहे हमारी समाजी मान मर्यादा छिन्न–बिन्न हो जाय।

परन्तु पर्दे का अनुसरण यदि समाज करे तो ऐसी विलासी आवश्यकताओं की चाहत हमारे मन में नहीं होगी।

पुरूषों को शारीरिक रूप से स्त्रियों पर वरीयता प्राप्त है, इसे हम पहले ही बता चुके हैं। बुद्धि और विवेक के क्षेत्र में भी पुरूष स्त्रियों से आगे देखा जाता है। इन दोनों मोर्चों पर पुरूषों से स्त्री सामना नहीं कर सकती परन्तु वात्सल्य और दया के क्षेत्र में स्त्रियों ने अपना झंडा ऊंचा कर लिया और अपनी रक्षा तथा पर्याप्त दूरी बनाए रखने के लिए स्वयं को पर्दे की आड़ में कर लिया।

इस्लामी चेतना ने स्त्रियों को प्रेरित किया कि वे पर्दे का सहरा लें तो उनकी गम्भीरता और पवित्रता की रक्षा सम्भव होगी वे जितना स्वयं को पुरूषों से दूर रखेंगी उतना ही उनका सम्मान बढ़ेगा। इस प्रकार पर्दे की अनेक उपलबधियों में एक यह भी है कि स्त्री के सामाजिक, पारिवारिक तथा निजी स्वरूप को गंम्भीर एवं सम्मानजनक बनाने में पर्दा बड़ा उपयोगी होता है।

स्वतन्त्रता पर प्रतिबन्ध

आरोप लगाया जाता है कि पर्दे ने स्त्री की स्वतंत्रता छीन ली है। जब कि यह उसका बुनियादी अधिकार है। इसके हनन से स्त्री के मानव–स्वरूप की अवहेलना होती है, अपमान होता है।

इस सम्बन्ध में पहले यही बताना अधिक उचित होगा कि स्त्री को घर में क़ैद करना और पराए पुरूषों के सामने बेपर्दा जाने में बड़ा अन्तर है। घर में क़ैद करना इस्लाम का नियम नहीं है। इस्लाम में पर्दे का वास्तविक स्वरूप एक कर्तव्य है जिसे स्त्री पूरा इस प्रकार करती है कि बेगाने पुरूष के सामने जाते हुए वह स्वयं को पर्दे में कर लेती है। यह भार पुरूषों की ओर से स्त्रियों पर लादा नहीं गया है और यह कोई अनुचित प्रतिबन्ध ा भी नहीं है जो स्त्रियों के बुनियादी अधिकरण को छीन लेता है। इससे किसी प्रकार की स्वतन्त्रता का हनन नहीं होता।

स्थ्य देशों में पुरूषों के लिए प्रतिबन्ध है कि वे उचित और पर्याप्त वस्त्र पहने बिना बाहर

न निकलें। यह प्रतिबन्ध उस देश के संविधान द्वारा या वहाँ की नागरिक स्त्रियों द्वारा नहीं लगाया गया फिर मानसिक चेतना के इस प्रतिबन्ध ा को आज हम आप और सभी स्वीकार करते है। इसे तो हम अनुचित नहीं मानते और इससे मौलिक अधिाकर छीनना हम नहीं कहते फिर स्त्रियों के लिए जिर सभ्यता का निर्धारण किया गया है उसे स्वतन्त्रता का हनन कहना कहां तक उचित है? यह आरोप सर्वथा निराधार है। मानव समाज को पर्दा पद्धति के प्रति आदर एवं श्रद्धा होनी चाहिए जिससे समाज में नारी का सम्मान बढ़ता हैं। उसकी मर्यादा की रक्षा होती और वह अपनी प्रतिष्ठा बनाए रखने में कोई कठिनाई अनुभव नहीं करती।

एक नारी का व्यक्तित्व उसी स्थिति में गम्भीर रह सकता है जब वह बाहर निकले तो उसकी चाल ढाल में संयम और संतुलन हो, उसके परिधान पुरूषों को अपने प्रति उत्तेजित और आकर्षित करने वाले न हों, वह किसी पुरूष को अपने प्रति आकर्षित करने में सक्रय न हो, क्योंकि चाल ढाल और हाव–भाव ही से व्यक्तित्व की झलक मिल जाती है। परिधान और बोली से उसके मनकी स्थिति का पता लग जाता है।

किसी धर्माचार्य अथवा धर्म गुरू को जब हम देखते हैं कि वह उचित परिधान एवं भर्गिमा का उल्घन कर के स्वयं को अधिक सज धज और भाव भंगिमा द्वारा ''उच्च'' प्रदर्शित करता है। अर्थात् पगड़ी को अधिक बड़ी करके, लबादे में विशेषता लाकर, दाढ़ी का अधिक विस्तार करके, अपनी बोल–चाल में अप्रचलित परन्तु प्रभावशाली शैली का उपयोग करके जब जन साधारण को अपने प्रति सम्मान देने की प्रेरणा देता है तो क्या हम ऐसी स्थिति की प्रशंसा करते हैं? क्या इस बनाव सिंगार से उस व्यक्ति का आदर बढ़ जाता है?

इसी प्रकार कोई अधिकारी अपनी वेश भूषा को असामान्य करके, प्राप्त पदकों को तड़क भड़क के साथ सजा कर दम्भपूर्ण चाल से अकड़ता हुआ चलता है तो उस का व्यक्तित्व क्या अधिक सराहनीय बन जाता है? क्या उस की स्थिति परिहासजनक नहीं हो जाती ?

यदि उपरोक्त दोनों स्थितियों को हम औचित्य के विरूद्ध मानते हैं और उसे पसन्द नहीं करते तो स्त्री की साज–सज्जा में असिरंजक को कैसे स्वीकार कर सकते हैं ? क्या असाधारण वेशभूषा और असामान्य भाव भंगिना से सभ्य समाज सन्तुष्ट हो सकता है ? जब कि यह वास्तविकता हम जानते है कि इन अनैतिक गति विधियों से नारी के साथ संपूर्ण समाज भी प्रभावित होता है। फिर किस तर्क के आधार पर पर्दे को "स्वतन्त्रता पर प्रतिबन्ध" माना जाता है? इससे स्त्रियों के मौलिक अधिकार किस प्रकार छीने जाते हैं?

परन्तु यदि कोई स्त्रियों को घर की सीमा में ही रहने पर बाद्ध्य करता है, उसे कहीं आने जाने से मना करता है तो मौलिक अधिकार का हनन या स्वतंत्रता पर प्रतिबन्ध लगाना उचित है। और इस प्रकार के प्रतिबन्ध से इस्लाम सहमत नहीं है बल्कि लेख के सन्दर्भ में जिस इस्लामी पर्दे का उल्लेख किया गया है उनमें यह प्रतिबन्ध पाया जाता है जिसका इस्लाम कभी समर्थन नहीं करता। इस्लाम में ऐसा अस्वाभाविक पर्दा न तो कभी प्रचलित था और न ही वर्तमान यग में इस्लाम इसकी आज्ञा देता है।

किसी भी मुसलमान ज्ञानी से आप प्रश्न करें कि इस्लाम क्या स्त्रियों को घर से बाहर निकलने पर प्रतिबन्ध लगाता है ? तो उत्तर मिलेगा ''नहीं।'' आप पूछें कि स्त्री को पुरूषों के साथ किसी प्रकार का क्रय'विक्रय, बोल–चाल या सामाजिक गति विधियों से मना करता है? इसका भी उत्तर होगा ''नहीं'' ! आप पूछ कर देखें कि, स्त्री को उद्योग व्यवसाय, ज्ञान कला जैसे विषयों में सक्रिय भाग लेना इस्लाम मना करता है , तो उत्तर होगा ''नहीं''। इन सब प्रश्नों का उत्तर ''नहीं'' इस लिए होता है क्योंकि यह सब मौलिक अधिकार हैं जिसको इस्लाम

छीनना नहीं चाहता क्योंकि इस्लामी नियम स्वाभाव के विरूद्ध नहीं है।

पर्दे के विषय में समझने की केवल यह बात है अर्थात समस्या केवल ''पर्दा'' और ''प्रतिबन्ध'' के अन्तर की यह है कि, इस्लाम ने पर्दे का नियम इस उद्देश्य से प्रतिपादिक किया है कि अपना प्रदर्शन, आर्कषण तथा अपनी वेश भूषा एंव सुन्दरता को एक माध्यम के रूप में प्रयोग करके पुरूषों की वासना न जगाएं जिसका परिणाम अशांति के अतिरिक्त कुछ नहीं,। पुरूषों को भी अपनी सीमा से बाहर आने से इस्लाम मना करता है।

गतिविधियों में अवरोध

पर्दे पर एक प्रतिबन्ध ''गतिविधियों में अवरोध'' का भी आरोप लगाया जाता है। कहा जाता है कि स्त्रियों की सामाजिक सक्रियता में रूकावट का काम पर्दा ही करता है। जीवन के विभिन्न क्षेत्र में पर्दा स्त्रियों की क्षमता और योग्यता का उपयोग करने के मार्ग में अवधान का काम करता है। प्रगति में बाधक बनता है।

इस सम्बन्ध में कुछ स्पष्टीकरण देने से पहले हम एक स्वाभाविक स्थिति का दार्शनिक पक्ष प्रस्तुत कर देना अति आवश्यक समझते हैं जिस से इस तर्क के स्पष्टीकरण में कठिनाई न हो। जब किसी प्राणी में कोई क्षमताप्रदत होती है तो वह क्षमता इस का प्रमाण होता है कि उक्त प्राणी में सम्बन्धित योग्यता की उपयोगिता का अधिकार है। ऐसी स्थिति में उक्त क्षमता की सक्रियता पर प्रतिबन्ध लगाना होता है।

किसी स्त्री को उसकी क्षमता के उपयोग से वंचित करना भी अन्याय होगा। केवल उस स्त्री पर नहीं बल्कि और संस्कृति पर डाका डालना होगा। ऐसे प्रत्येक कार्य या विचार जो स्वाभाविक और प्रदत्त योग्यता से वंचित करें, समाज के लिए हानिकारक होते है, स्त्री भी यदि स्वाभाविक तथा प्रदत योग्यता से वंचित कर दी जाए तो व्यक्तिगत निराशा सहित सामाजिक गतिरोध एव स्वयं पुरूषों की प्रगति में शिथिलता का कारण होगा।

''प्रगति में अवरोध'' के लिए जिस पर्दे को उत्तरदायी बताया जाता है वह ''इस्लामी पर्दा'' नहीं बल्कि लेख की प्रस्तावना में चर्चित अन्य पर्दा होगा। क्योंकि इस्लाम स्त्रियों को घर की परिधि में बन्दी बन कर रहने की शिक्षा नहीं देता तथा उनकी योग्यता की सक्रियता में बाधा नहीं बनता। इस्लामी पर्दे का तात्पर्य है कि शारीरिक आनन्द का स्त्रोत केवल वैद्य दाम्पत्य जीवन ही हो। इसी नीति के कार्यान्वयन के लिए घर से बाहर निकलने पर स्त्रियों को उन समस्त गतिविधियों से इस्लाम मना करता है जिस से पुरूषों की भावना उत्तेजित हो। इसी प्रकार पुरूषों पर भी प्रतिबन्ध कलंकित होती है साथ ही साथ सामाजिक प्रगति में अवरोध भी आता है।

वर्तमान युग के आर्थिक क्षेत्र में एक प्रचलन उग्र रूप धारण किए हुए है जिसे हम पर्दे के परित्याग का परिणाम कह सकते हैं कि दुकानदार वस्तुओं की श्रेष्ठता पर ध्यान न देकर एक सुन्दर ''सेल्स गर्ल'' नियुक्त कर लेते हैं और उसकी आकर्षण शक्ति को धन बटोरने का साधन बनाते है। अनावश्यक वस्तुएं भी पुरूष ग्राहक केवल कुछ देर निकट रहने के कारण ख़रीद लेते हैं। इसे व्यापार न कहकर ''वासना की मरीचिका'' कहना अधिक सटीक होगा।

अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए मात्र प्रदर्शन हेतु मानव अधिकार का ढोल पीटने वाले कहते है कि, ''स्त्री को काला थैला न उढ़ाओ।'' उत्तर में हम पूछना चाहते है कि क्या स्त्री को ऐसे कपड़े पहनना चाहिए जो उनके सीने और कूल्हे को उभार कर आकर्षक बना दें ? तथा अपनी सामान्य स्थिति से अधिक चुम्बकीय शक्ति का प्रदर्शन करें ? वासनापूर्ण हाव भाव से पुरूषों को उत्तेजित करें। तथा अस्वाभाविक, बनावटी सुन्दरता से पुरूषों को धोखा दें।

स्त्री के लिए प्रत्येक श्रंगार और मोहक वेशभूषा का उपयोग केवल उसके पति के लिए उचित है। पराए व्यक्ति को दिखाने के लिए इस्लाम इसकी आज्ञा नहीं देता।

युवतियाँ यदि सादे वस्त्रों में सामान्य वेशभूषा के साथ स्कूल, कॉलेज या विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त करने जाएँ तो क्या वे उचित रूप से शिक्षा ग्रहण नहीं कर सकेंगी ? स्त्रियाँ यदि पर्दे के साथ स्वभाविक रूप से कार्यालय अथवा सम्बन्धित संस्थानों में कार्य करने जाएँ तो क्या संतोषजनक कार्य नहीं कर सकतीं? स्त्रियों को पर्दे में न रह कर पुरूषों के बीच पुरूषों की भांति रहने के लिए दबाव डालने का तात्पर्य क्या मात्र वासना–पूर्ति के अतिरिक्त भी कुछ है ? यदि विचार करें तो ''स्त्री–स्वतंत्रता'' का उद्देश्य आत्म स्वार्थ के अतिरिक्त कुछ नहीं और यह स्वार्थ पुरूषों में प्रदत्त ''नारी चाहत'' की संतुष्ठि के अतिरिक्त कुछ नहीं है।

इसी प्रकार में कुछ लोगों का मत है कि– स्त्री तथा पुरूष के बीच पर्दे का अस्तित्व चाव में वृद्धि करता है। तथा इच्छा का दमन मानसिक रोग का कारण होता है। नवीन मनोविज्ञान में विशेषतयः ''फ्रायड'' के यहाँ निराशा तथा असफ़लता की अधिक चर्चा हैं उनका मत है कि असफ़लता की अधिक चर्चा है। उनका मत है कि असफ़लता सामाजिक प्रतिबन्धों की देन होती है। यह सुझाव देते हैं कि यथा सम्भव इच्छाओं को स्वतन्त्र छोड़ दिया जाय जिससे असफ़लता का सामना न करना पड़े।

यह सच है कि असफ़लता विशेषतयः शारीरिक सम्बन्ध में असफ़लता भयंकर तथा असाध्य रोगों का कारण होती है। यह भी मानना उचित नहीं है कि स्वाभाविक इच्छाओं का दमन करना चाहिए। परन्तु इस वास्तविकता से पलायन भी असम्भव है कि सामाजिक प्रतिबन्धों का समापन इस समस्या का समाधान नहीं बल्कि जटिलता में बढ़ोत्तरी का कारण होगा। शारीरिक सम्बन्ध तथा अन्य इच्छाओं से सम्बन्धित प्रतिबन्ध यदि हटा लिया जाय तो वास्तविक प्रेम का कोई अर्थ ही नहीं रह जायगा। एक अनर्थ यह भी निश्चित है कि जो वस्तु जितनी अधिक सुलभ होगी उससे भिन्न वस्तु की चाहत उत्पन्न होगी।

''रसल'' का मत है कि अश्लील चित्रों के प्रकाशन को यदि प्रतिबन्धों से अलग कर दिया जाय तो एक अवधि के बाद लोग इससे अनिच्छित हो जायेंगे। यह सिद्धान्त एक विशेष चित्र अथवा विशेष मुद्रा की अश्लीलता तक सीमित है। समस्त प्रकार की अश्लीलता के लिए यह सिद्धान्त उपयोगी नहीं हो सकता। अर्थात सम्बन्धित अश्लील इच्छा से मन तो भर जायगा परन्तु उसका स्थान सभ्यता एवं शालीनता ले लेगी, असम्भव है।

इस सम्बन्ध में कि प्रतिबन्धों से इच्छाओं की आग अधिक भड़कती है।''रसल'' स्वयं एक स्थान पर स्वीकार करता है कि ''शारीरिक सम्बन्ध'' और अन्य इच्छाओं में अन्तर है। इस पक्ष पर ध्यान देना आवश्यक है कि, शारीरिक सम्बन्ध की स्वतंत्रता काम शक्ति की ओर प्रेरणा देती है। जिसका प्रमाण उन देशों के वृतांत से मिल जाता है जहाँ 'शारीरिक–सम्बन्ध' दैनिक आवश्यकता के समान सुलभ एवं स्वतंत्र रूप से उपलब्ध है। नैतिक–अनैतिक, वैद्य–अवैद्य का जहाँ कोई अर्थ नहीं।

स्वाभाविक इच्छाओं की दो श्रेणी है। प्रथम इच्छाएं सीमित तथा साधारण है जैसे खाना तथा सोना। इस प्रकार की इच्छा जब पूरी हो जाती है उसके प्रति रूचि नहीं रह जाती। लेकिन स्वाभाविक इच्छा से सम्बन्धित यह भी अकाट्य सत्य है कि पूँजी तथा पद की इच्छा जैसे जैसे पूरी होती है वैसे–वैसे उसकी चाहत की परिधि बढ़ती जाती है।

ठीक इसी प्रकार शारीरिक सम्बन्ध की इच्छा के भी दो पक्ष हैं। एक शारीरिक उत्तेजना जो इस सूची में सम्मिलित होती है जो सीमित एवं साधारण है परन्तु दूसरे पक्ष में दोनों शरीरों के मिलन से ''हार्दिक–मेल'' भी हो, असम्भव है। उदाहरणार्थ प्रत्येक समाज एक निश्चित खाद्य पदार्थ का इच्छुक होता है। जिसकी मात्रा कम हो तो निर्वाह नहीं होगा, तथा अधिक हो जाए तो बेकार होगा। अर्थात यदि पूछा जाए कि एक वर्ष

जाएगी परन्तु यदि पूछा जाए कि एक वर्ष की आवश्यकता पूर्ति के लिए कितनी धनराशी की इच्छा है और आवश्यकता से अधिक धनराशी यदि उपलब्ध की जाए तो इनकार असम्भव है। क्योंकि इच्छा की सीमा अनिश्चित होती हैं। इसी प्रकार ''ज्ञान'' है जिसके अर्जित करने की कोई सीमा नहीं है। ''पद'' प्राप्त करने में भी मानव स्वभाव यही है कि कभी सन्तुष्ट देख नहीं पड़ता। शारीरिक सम्बन्ध की इच्छा पर प्रतिबन्ध न रहने से यह इच्छा पूरी नहीं होती, प्रमाण स्वरूप प्राचीन काल के लम्बे चौड़े शर्नवास देखे जा सकते हैं जहां की प्यास से सम्राट और राजा–महाराजाओं की तृप्ति कभी नहीं होती थी। प्यास या मांग की यह श्रेणी जिसे वासना कहा जाता है कभी सन्तोष नहीं पाती।

''वृद्धि'' एवं ''सहजता'' द्वारा सन्तोष प्राप्त करना किसी प्रकार भी सम्भव नहीं। कोई यदि इस मार्ग से लक्ष्य प्राप्त करना चाहे तो ठी उसी प्रकार होगा जैसे कोई लकड़ी आग पर फेंक कर आग बुझाना चाहे।

वस्तुतः इच्छाएँ मानव स्वभाव काएक अंग है और उन पर कोई प्रतिबन्ध सम्भव नहीं। मनुष्य स्वाभाविक रूप से ''बहुत अधिक'' का इच्छुक बन कर आया है। जब एक लक्ष्य प्राप्त कर लेता है तो दूसरे लक्ष्य की इच्छा जाग्रित हो जाती है। असफलता का कारण जो लोग प्रतिबन्ध को बताते हैं वे ग़लती पर है। क्योंकि इच्छा उस बालक के समान है जो माँ के दूध से रूचि रखता है। यदि दूध पीना किसी प्रकार बन्द न किया जाए तो इच्छा पूर्ति की इस स्वतंत्रता का परिणाम यह होगा कि यह कम संदेव चलता ही रहेगा।''फ्रायड'' जैसों ने ग़लती यह की कि उन्होंने यह सोच लिया कि इच्छाओं की पूर्ति का मात्र साधन यह है कि यथा सम्भव इच्छाओं को खुला छोड़ दिया जाए।

वे केवल प्रतिबन्धों और उस के परिणामों पर ध्यान दे कर प्रतिबन्धों को इच्छाओं की बग़ावत समझ बैठे और सिद्धान्त बना डाला कि इच्छाओं की पूर्ति के लिए उन्हें बिलकुल स्वतंत्र रखना चाहिए। यहां तक कि, इस सन्दर्भ में स्त्रियों को सौन्दर्य प्रदर्शन तथा पुरूष को उससे हर प्रकार के सम्बन्ध की स्वतंत्रता होनी चाहिए। उन्होंने विषय के केवल एक ही पक्ष को देखा और इस पर ध्यान ही नहीं दिया कि जिस प्रकार प्रतिबन्ध तथा रूकावट इच्छाओं को दबा कर मान्सिक समस्या खड़ी करती हैं उसी प्रकार स्वयं को इच्छाओं के हवाले कर देना, जटिलताओं के समुन्द्र में डूब जाना भी मनुष्य को पागल कर देता है और यह भी अकाट्य सत्य है कि प्रत्येक व्यक्ति की प्रथ्येक इच्छा पूरी होना सम्भव नहीं और इस असम्भव में परिणाम स्वरूप मानसिक रोग का जन्म होता है। वास्तविकता की परिभाषा इस प्रकार उचित है कि–मनुष्य इच्छाओं की पूर्ति के सम्बन्ध में तेल के उस कुवें के समान है जिसमें गैस यदि एकत्रित रहे तो धमाके से फट जाए। इस लिए उसमें से तत्व की निकासी तो आवश्यक है परन्तु संतुलन के साथ।

समाज जब आँख, हाथ तथा अन्य अंग की स्वतंत्रता से इच्छा में तीव्रता लाकर सन्तोष प्राप्त करने वाले माध्यम से उस स्वतंत्र भावना को शांत करता है तो यह प्रक्रिया प्रभावहीन होगी। इसे तृप्ति के स्थान पर व्याकुलता बढ़ेगी। जैसे किसी वस्तु की मनुष्य में इच्छा हो, उसे सामने लाकर इच्छा तीव्र कर दिया जाए तो अनर्थ होना परन्तु इच्छित पस्तु यदि उसके सामने ही न लाई जाए तो धीर–धीरे स्वयं दम तोड़ देगी।

तार्त्पय यह कि इच्छाओं को स्वतंत्र छोड़ कर इच्छाओं से मन भर जाने पर, विमुख हो जाने वाली बात पर्दा के सन्दर्भ में प्रयुक्त करना असंगत होगा बल्कि पुरूषों में प्रदत्त 'स्त्री चाहत' भावना द्वारा यदि समाज को घृणित तथा अपराधी होने से बचाना है तो स्त्री को पर्दा के माध्यम से पुरूषों से अलग रहना ही पड़ेगा।

